[2019] 3 एस.सी.आर. 1050

मैसर्स एस.सी.जी. कॉन्ट्रैक्ट्स इंडिया प्राइवेट लिमिटेड

बनाम

के.एस. चमनकर इंफ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य

(सिविल अपील संख्या 1638/2019) फ़रवरी 12, 2019

[आर.एफ. नरीमन और विनीत सरन, जे.जे.]

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (उच्च न्यायालय अधिनियम, 2015 के तहत वाणिज्यिक न्यायालयों, वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीलीय प्रभाग के मद्देनजर संशोधित, जो 23.10.2015 से लागू): आदेश–7, नियम–1 परन्तुक एवं नियम–10, परन्तुक, आदेश–5, नियम–1, उपनियम (1), द्वितीय परंतुक – लिखित कथन – प्रक्रिया जब पक्षकार न्यायालय द्वारा मांगे जाने पर लिखित कथन प्रस्तुत करने में विफल रहता है – तथ्यों पर, एक वाणिज्यिक वाद में, प्रतिवादी संख्या– 1 समन के तामील होने के दिनांक से 120 दिन के अंदर लिखित कथन दाखिल करने में विफल– इसी बीच, आदेश–7 नियम–11 के तहत आवेदन दाखिल– दिनांक 05.12.2017 के आदेश से अस्वीकृत– इसके बाद, प्रतिवादी सं० 1 के द्वारा लिखित कथन दाखिल करने के लिये समय मांगा गया– प्रतिवादी द्वारा खर्चा अदा करने के शर्त पर दिनांक 15.12.2017 तक का समय बढ़ाया गया– उसके अनुसरण में लिखित कथन दिनांक 15.12.2017 को दाखिल– उसके बाद विलम्ब से इस आशय का आवेदन दाखिल की सी.पी.सी. में संशोधन के मद्देनजर लिखित कथन अभिलेख पर नहीं लिया जा सकता, क्योंकि वाद में समन तामीला से 120 दिन बीत चुकें है– उच्च न्यायालय द्वारा लिखित कथन अभिलेख पर लेने की अनुमति जबकि दिनांक 05.12.2017 का आदेश अंतिम हो चुका था और कानून के प्रावधानों में संशोधन किया गया था – अपील में, अभिनिर्धारित:– आदेश–8 नियम–10 के परन्तुक के अनुसार न्यायालय के पास 120 दिन से आगे समय देने की कोई शक्ति नहीं है – समन के तामीला से 120 दिन से अधिक होने पर, प्रतिवादी लिखित कथन दाखिल करने के अपने अधिकार खो देगा और अदालत लिखित कथन को अभिलेख पर लेने की अनुमति नहीं देगा– यह सब इस तथ्य की ओर इशारा करता है

कि अन्तर्गत आदेश–8, नियम–1 के तहत लिखित कथन दाखिल करने के पहले के कानून अब रद्ध कर दिये गये हैं– आदेश–5 सपठित आदेश–8 नियम–1 व 10 के स्पष्ट, निश्चित और अनिवार्य प्रावधानों के कारण धारा–151 के तहत अंतर्निहित शक्ति का सहारा लेकर नहीं बचा जा सकता है– अतः, आदेश दिनांकित 05.12.2017 कायम नहीं रखा जा सकता– द्वितीय आदेश दिनांकित 24.09.2018 भी अपास्त किया जाता है– मान भी लिया जाए कि 05.12.2017 का आदेश अंतिम है, पूर्व न्याय कानूनी प्रतिषेध की गलत व्याख्या के रास्ते नहीं आ सकता– अतः प्रतिवादी संख्या० 1 का लिखित कथन अभिलेख से बाहर किया जाए– पूर्ण निर्णय।

अपील स्वीकार करते हुए न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारितः

1.1 सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश–8 नियम–1 एवं 10 परंतुक, आदेश– 5 नियम–1 उपनियम (1) द्वितीय परन्तुक में किये गये संशोधन के अवलोकन से यह दर्शाता है कि साधारणतः लिखित कथन 30 दिन के अन्दर दाखिल करना चाहिये। हालांकि 90 दिन तक लिखित कथन अभिलेख पर लेने की मोहलत दी जा सकती है, यदि न्यायालय ऐसे कारणों से जो लेखबद्ध किये गये हो और खर्चे की अदायगी जो न्यायालय को उचित लगे, का आदेश पारित करे। समन के तामीला होने के 120 दिन बाद प्रतिवादी लिखित कथन दाखिल करने का अधिकार खो देता है और न्यायालय लिखित कथन को अभिलेख पर लेने की अनुमति नहीं दे सकता है।

आदेश–8 नियम–10 के परन्तुक में पुनः यह जोड़ा गया है कि न्यायालय के पास 120 दिन से अधिक समय देने की शक्ति नहीं है। लिखित कथन नहीं दाखिल करने के परिणाम के सम्बन्ध में सी.पी.सी के प्रावधानों के संशोधन से यह स्पष्ट किया गया है कि यह अनिवार्य है। परिणाम स्वरूप लिखित कथन नहीं दाखिल करने के अधिकार खोने पर, कोई समय सीमा नहीं बढ़ाने के कारण और यह तथ्य की न्यायालय लिखित कथन अभिलेख पर लाने की अनुमति नहीं देगा– यह सभी इस तथ्य को इंगित करता है कि पूर्व के आदेश –8 नियम–1 के तहत लिखित कथन दाखिल करने के जो कानून थे वह अब रद्ध हो गये है। आदेश–5 सपठित आदेश–8 नियम–1 व 10 के स्पष्ट, निश्चित और अनिवार्य प्रावधानों के कारण धारा –151 के तहत अंतर्निहित शक्ति का सहारा लेकर नहीं बचा जा सकता तथा उसके विपरीत नहीं किया जा

सकता जो उसमें वर्णित है। अतः आदेश दिनांकित 05.12.2017 सी.पी.सी में संशोधन के मद्देनजर कायम नहीं रखा जा सकता।

1.2 एक विधिक–विवाघक, जो समान पक्षकारों के मध्य उत्पन्न बाद के वाद या कार्यवाही में उत्पन्न हुआ हो उसमे पूर्व निर्णय लागू नहीं होता है, यदि किसी कानूनी प्रतिषेध के सम्बन्ध में गलत निर्णय वैधानिक प्रावधानों के गलत व्याख्या के आधार पर पूर्व योजित वाद या कार्यवाही में दी गयी है, तो उसका कोई प्रभाव नहीं होता है। इस तथ्य के बावजूद कि पक्षकारों में मध्य जो विवाघ–विषय है वह प्रत्यक्षतः और सारतः पूर्व वाद या कार्यवाही में विवाघक हो, यही वह कारण है कि इस तरह के वादों में केवल पक्षकारों के अधिकारों पर विचार नहीं किया जाता है – (जैसा कि पक्षकारों के मध्य किसी केस में कानून की गलत व्याख्या) कयोंकि किसी कानूनी प्रतिषेध में जो लोकहित निहित होता है, जिसे रद्ध नहीं किया जा सकता, यह इस केस के तथ्यों में लागू है। क्योंकि यदि यह मान भी लिया जाये कि 05.12.2017 का आदेश अंतिम है, पूर्व निर्णय कानून प्रतिषेध की गलत व्याख्या के आड़े नहीं आ सकता। अतः द्वितीय आदेश दिनांकित 24.09.2018 अपास्त किया जाता है। प्रतिवादी संख्या० 1 का लिखित कथन अभिलेख से पृथक किया जाये। (Para 18, 19)(1059–BC; F)

केनरा बैंक बनाम एन.जी. सुब्बाराय शेट्टी और अन्य। एआईआर 2018 एससी 3395: [2018] एससीआर 884–पर विश्वास व्यक्त। ओकु टेक प्राइवेट लिमिटेड बनाम संगीत अग्रवाल एवं अन्य। सीएस (ओएस) संख्या० 3390/2015 दिनांकित 11.08.2016– स्वीकृत। बिहार राज्य और अन्य बनाम बिहार राज्य भूमि विकास बैंक समिति (2018) 9 एससीसी 472: [2018] 7 एससीआर 1147; भानु कुमार जैन बनाम अर्चना कुमार एवं अन्य(2005) 1 एससीसी 787 : [2004] 6 पूरक एससीआर 1104 ; शेख सलीम हाजी अब्दुल खयूमसाब बनाम कुमार और अन्य (2006) 1 एससीसी 46: [2005] 5 पूरक। एससीआर 349 ; आर.के. रोजा बनाम यू.एस. रायडू और अन्य [2016] एससीआर 221; कैलाश बनाम नन्हकू (2005) 4 एससीसी 480: [2005] 3 एससीआर 289; सलेम एडवोकेट बार एसोसिएशन बनाम भारत संघ (2005) 6 एससीसी 344: [2005] 1 पूरक

एस.सी.आर. 929 3 राज्य बनाम एन.एस. ज्ञानेश्वरन (2013) 3 एससीसी 594; मनोहर लाल चोपड़ा बनाम राय बहादुर राव राजा सेठ हीरालाल [1962] पूरक 1 एससीआर 450; माजा कॉस्मेटिक्स बनाम ओएसिस कमर्शियल प्रा. लिमिटेड 2018 एससीसी ऑनलाइन डेल 6698 – संदर्भित विधि व्यवस्था [2018] 7 एससीआर 1147 पैरा 5 को संदर्भित [2004] 6 पूरक एससीआर 1104, पैरा 6 को संदर्भित [2005] 5 पूरक एससीआर 349 पैरा 6 को संदर्भित [2016] एससीआर 221 पैरा 6 को संदर्भित, [2005] 3 एससीआर 289 पैरा 9 को संदर्भित [2005] 1 पूरक एससीआर 929 पैरा 9 को संदर्भित (2013) 3 एससीसी 594 पैरा 9 को संदर्भित [1962] पूरक 1 एससीआर 450 पैरा 16 को संदर्भित, [2018] एससीआर 884 पैरा 18 मैसर्स एससीजी कॉन्ट्रैक्ट्स इंडिया प्राइवेट लिमिटेड लिमिटेड वी.के.एस.चमनकर को संदर्भित करता है।

इन्फ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 1638/ 2019
दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली के निर्णय और आदेश दिनांकित 05.12.2017 से जो सिविल वाद (वाणिज्यिक) संख्या 199/2017 से और सी.एस. (वाणिज्यक) संख्या 199/2017 के एल.ए. संख्या– 10569/2018 में पारित आदेश दिनांक 24.09.2018. से।

अपीलार्थी के तरफ से अधिवक्तागण राजेश महाजन, डॉ. एस. रितम खरे, सुश्री उर्वी कुठियाला, सुश्री श्वेता चौरसिया (मैसर्स एस लीगल)

प्रत्यर्थीगण की तरफ से अधिवक्तागण एल. डी. जोशी, अमजद सलीम, निशांत आर. कटनेश्वरकर, मेसर्स लीगल ऑप्शंस।

इस न्यायालय का निर्णय आर.एफ.नरीमन, जे. द्वारा पारित किया गया।
1. अनुमति प्रदान
2. इस मामले में एक वाद दिनांक 10.03.2017 को मु० 6,94,63,114/– रू का दावा करते हुए दाखिल किया गया। प्रतिवादी संख्या –1 पर वाद के समन का तामीला दिनांक

14.07.2017 को हुआ। 120 दिन हमें 11.11.2017 तक ले जाता है और उस दिन तक कोई लिखित कथन दाखिल नहीं किया गया था। इसी बीच, जबकि एक प्रार्थनापत्र अन्तर्गत आदेश –7 नियम–11 के तहत दाखिल किया गया। उक्त प्रार्थनापत्र सुनवाई के लिये पेश हुई और प्रथम प्रश्नगत आदेश दिनांक 05.12.2017 के द्वारा अस्वीकृत किया गया। प्रार्थनापत्र अन्तर्गत आदेश–7 नियम–11 के अस्वीकृत होने के बाद, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा यह दर्ज किया गया कि पूर्व में कॉपी दिये जाने के बावजूद वादी की तरफ से कोई हाजिर नहीं हुआ। उन्होने यह भी दर्ज किया कि अब प्रतिवादी सं० 1 के अधिवक्ता द्वारा यह कहा गया है कि लिखित कथन दाखिल करने हेतु सात दिन का समय दिया जाए। उक्त आदेश का पैरा–14, जो निम्नलिखित हैः–

"14 प्रतिवादी सं० 1 के द्वारा 25,000/– रू वादी के अधिवक्ता को 15.12.2017 या उससे पूर्व तक अदा करने की शर्त पर, लिखित कथन दाखिल करने का समय 15 दिसम्बर, 2017 तक बढ़ाया जाता है ।यदि दोनो में से कोई शर्त का अनुपालन नहीं किया गया, तो प्रतिवादी सं० 1 का लिखित कथन दाखिल करने का अधिकार बिना किसी अग्रिम आदेश के समाप्त समझा जायेगा।"

3. इस आदेश के अनुपालन में प्रतिवादी सं० 1 के द्वारा दिनांक 15.12.2017 को लिखित कथन दाखिल किया गया। विलम्ब से दाखिल एक प्रार्थनापत्र दिनांकित 06.08.2018 में इस बात का उल्लेख किया गया है कि हाल ही में सिविल प्रक्रिया संहिता में जो संशोधन किया गया है उसका अनुपालन नहीं किया गया। अतः लिखित कथन जिसे अभिलेख पर अभी लिया जाना है, उसे इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि इस वाद के समन के तामीला से 120 दिन समाप्त हो चुके है, अभिलेख पर नहीं लिया जाना चाहिए।

4. दिनांक 24.09.2018 को अन्य विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा उक्त प्रार्थनापत्र पर विचार किया गया और यह अभिनिर्धारित किया कि आदेश दिनांक 05.12.2017 जो अंतिम है, इसके बावजूद कि कानून के प्रावधान अन्यथा हों, तब भी, प्रतिवादी सं० 1 के द्वारा दाखिल लिखित कथन जो उसके द्वारा 15.12.2017 को दाखिल किया गया है, उसे अभिलेख पर लिया जाना चाहिये। वादी के द्वारा उपरोक्त दोनों आदेशों

के विरूद्ध विशेष अनुमति याचिका दाखिल की गयी है।

5. वादी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता में हाल में किये गये संशोधन पर ध्यान आकृष्ट किया गया और बहस के दौरान बिहार राज्य बनाम बिहार राज्य भूमि विकास बैंक समिति (2018) 9 एस.सी.सी. 472 के साथ–साथ कैनरा बैंक बनाम एन.जी. सुबराया सेठी एवं अन्य ए.आई.आर. 2018 एस.सी.सी. 3395 पर विशेष बल देते हुए यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि जो संशोधन किये गये हैं उसमें लिखित कथन नहीं दाखिल करने के परिणाम दिये गये हैं। और जो ऐसा है कि, आदेश–8 नियम 1 व 10 के प्रावधानों को अब निदेशात्मक नहीं कहा जा सकता, बल्कि केवल आज्ञापक कहा जा सकता है। इस प्रकार चूंकि एक कानूनी प्रतिषेध अब उपलब्ध है, पूर्व न्याय के सिद्धान्त का उपयोग नहीं किया जा सकता।

6. इसके विपरीत, प्रतिवादीगण की तरफ से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता के द्वारा विष्णु कुमार जैन बनाम अर्चना कुमार एवं अन्य (2005) 1 एस.सी.सी. 787 एवं शेख सलीम हाजी अब्दुल खयूमसाब बनाम कुमार एवं अन्य (2006) 1 एस.सी.सी. 46 की विधि व्यवस्था पर विश्वास व्यक्त करते हुए यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि पश्चात वाद में पूर्व निर्णय व एक ही वाद के दो अलग स्तर में पूर्व निर्णय में काफी अन्तर है। उसके द्वारा यह भी अभिकथित किया गया है कि आदेश दिनांक 05.12.2017 अंतिम हो चुकी थी और उसे उक्त वाद में डिक्री पारित करने के बाद ही चुनौती दी जा सकती है और स्पष्टतः आदेश दिनांक 24.09.2018 सही है। उसके द्वारा यह भी अभिकथित किया गया है कि आदेश दिनांक 05.12.2017 का क्रियान्वयन हो चुका है और न्यायालय द्वारा किये गये गलत कार्य उसे पक्षपात नहीं कर सकते। उसके द्वारा आर.के. रोजा बनाम रोजस रायडू एवं अन्य (2016) 14 एस.सी.सी. 275 पर विश्वास व्यक्त करते हुए यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि चूंकि आदेश –7 नियम–11 का एक प्रार्थनापत्र दाखिल किया गया था और उसे निर्मित करने के बाद ही वाद का विचारण शुरू होना था, इसलिये यह स्पष्ट है कि लिखित कथन दाखिल नहीं किया जा सकता था। उसके द्वारा धारा 151 सी.पी.सी पर विश्वास व्यक्त किया गया जो न्यायालय, के अंतर्निहित शक्ति के सम्बन्ध

में है विशेषकर उच्च न्यायालय जो कोर्ट ऑफ रिकार्ड है, और वह उक्त धारा का प्रयोग वर्तमान परिस्थित में जहां घोर–अन्याय हो रहा हो, कर सकता है।

7. दोनो पक्षो के विद्वान अधिवक्ता को सुना। यह जरूरी है कि सबसे पहले कानूनी प्रावधानों पर विचार किया जाये।

8. उच्च न्यायालय अधिनियम, 2015 के तहत वाणिज्यिक न्यायालयों, वाणिज्यिक प्रभाग और अपीलीय प्रभाग, जो दिनांक 23.10.2015 से प्रभावी है, के द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता में कुछ संशोधन किये गये हैं। आदेश–5 नियम–1 उपनियम–1 से द्वितीय परन्तुक के लिये निम्नलिखित परन्तुक प्रतिस्थापित किये गये है:–
"परन्तु यह और कि जहां प्रतिवादी तीस दिनों की उक्त अवधि के भीतर लिखित कथन दाखिल करने में असफल रहता है, वहां उसे ऐसे अन्य दिन, यथा न्यायालय द्वारा लिखित में अभिलिखित किये कारणों से विनिर्दिष्ट किया जा सके एवं ऐसे परिव्ययों के संदाय पर, यथा न्यायालय उचित समझे, परन्तु जो समंस की तामील के दिनांक से एक सौ बीस दिन की अवधि के पश्चात् नहीं होगी, लिखित कथन दाखिल करने के लिए अनुज्ञात किया जाएगा एवं समंस की तामील के दिनांक से एक सौ बीस दिनों की अवधि के अवसान पर, प्रतिवादी लिखित कथन दाखिल करने का अधिकार खो देगा एवं न्यायालय लिखित कथन अभिलेख पर लेने के लिए अनुज्ञात नहीं करेगा।"

इसी तरह आदेश–8 नियम–1 में एक नया परन्तुक प्रतिस्थापित किया गया था जो निम्नलिखित है:–
"परन्तु जहां प्रतिवादी तीस दिवस की उक्त अवधि के भीतर लिखित कथन दाखिल करने में असफल रहता है वह ऐसे किसी अन्य दिवस को लिखित कथन दाखिल करने के लिये अनुज्ञात किया जायेगा जो न्यायालय द्वारा, उसके कारणों को लेखबद्ध करके और ऐसे परिव्ययों का, जो न्यायालय योग्य समझे, संदाय करने पर विनिर्दिष्ट किया जाए, परन्तु जो समन के तामील के दिनांक से एक सौ बीस दिन के पश्चात् का नहीं होगा और समन की तामील के दिनांक से एक सौ बीस दिन की समाप्ति पर प्रतिवादी लिखित कथन दाखिल करने का अधिकार खो देगा

और न्यायालय लिखित कथन अभिलेख पर लेने के लिये अनुज्ञात नहीं करेगा।"

आदेश–8 नियम–10 सिविल प्रक्रिया संहिता में एक अन्य परन्तुक डालकर इस पर पुनः जोर दिया गया था, जो इस प्रकार है–
"जब न्यायालय द्वारा अपेक्षित किये जाने पर लिखित कथन को उपस्थित करने में पक्षकार असफल रहता है तब प्रक्रिया– जहां ऐसा कोई पक्षकार, जिससे नियम 1 या नियम 9 के अधीन लिखित कथन अपेक्षित है, उसे न्यायालय द्वारा, यथास्थिति, अनुज्ञात या नियत समय के भीतर उपस्थित करने में असफल रहता है वहां न्यायालय उसके विरूद्ध निर्णय सुनाएगा या वाद के संबंध में ऐसा आदेश करेगा जो वह ठीक समझे और ऐसा निर्णय सुनाए जाने के पश्चात् डिक्री तैयार की जायेगी।
"परन्तु आगे यह कि कोई न्यायालय लिखित कथन दाखिल करने के लिये इस आदेश के नियम 1 के तहत उपबन्धित समय विस्तारित करने के लिए कोई आदेश नहीं करेगा।"

उपरोक्त प्रावधानों के अवलोकन से यह दर्शित होता है कि साधारणतः लिखित कथन तीस दिवस के अन्दर दाखिल किया जाना चाहिये। हालांकि 90 दिन तक की अनुग्रह अवधि प्रदान की गयी है जिसके लिये न्यायालय द्वारा उसके कारणों को लेखबद्ध करके और ऐसे परिव्ययों का जो न्यायालय योग्य समझें, संदाय करने पर लिखित कथन अभिलेख पर लेने के लिये अनुज्ञात कर सकता है। महत्व के विशेष तथ्य यह है कि समंस के तामील होने की तारीख से 120 दिन से अधिक होने पर प्रतिवादी लिखित कथन दाखिल करने का अधिकार खो देगा है और न्यायालय लिखित कथन अभिलेख पर लेने के लिये अनुज्ञात नहीं कर सकेगा। आदेश–8 नियम–10 के परन्तुक को जोड़ते हुये यह पुनः स्पष्ट किया गया है कि न्यायालय के पास इस 120 दिन की अवधि को और आगे बढ़ाने की कोई शक्ति नहीं है।

9. बिहार राज्य भूमि विकास बैंक समिति (सुपरा) के मामले में यह प्रश्न उठा था कि क्या माध्यस्तम् और सुलह अधिनियम 1996 की धारा

34(5) जो संशोधन अधिनियम 3/2016 से अंतः स्थापित किया गया था, वह अज्ञापक है, या निदेशात्मक है। उक्त निर्णय के पैरा–11 में न्यायालय द्वारा कैलाश बनाम ननकू (2005) 4 एस.सी.सी. 480 को उद्धत किया गया है जिसमें आदेश–8 नियम–1 को संदर्भित किया गया है, जो वाणिज्यिक न्यायालय अधिनियम में संशोधन से पूर्व की है। इसमें सलीम एडवोकेट बार एसोसियेशन बनाम भारत सरकार (2005) 6 एस.सी.सी. 344 को संदर्भित किया गया है जो कैलाश के निर्णय के समान यह अभिनिर्धारित करता है कि आदेश–8 नियम–1 में केवल अभिव्यक्ति " shall" उक्त प्रावधान को अज्ञापक नहीं बनाता है। न्यायालय द्वारा राज्य बनाम एन.एस. ज्ञानेशवरण (2013) 3 एस.सी.सी. 594 के न्यायानिर्णय में पैरा–17 पर विचार किया गया, जिसमें धारा 154(2) दण्ड प्रक्रिया संहिता को निदेशात्मक अभिनिर्धारित किया गया है, क्योंकि उक्त धारा के उल्लंघन होने पर उसके प्रभाव का कोई उल्लेख नहीं है। पैरा–22 में धारा–34 माध्यस्ता अधिनियम में विरोधाभासी होने के कारण, धारा–29 को अपास्त किया गया। इस न्यायालय द्वारा पैरा–23 में इस बात का उल्लेख है कि:–

"प्रावधान से यह देखा जायेगा कि धारा–34(5) और (6) के असमान यदि कोई अवार्ड निर्धारित या बढ़ी हुई अवधि के बाहर पारित किया जाता है जो उस धारा में वर्णित है, परिणामतः मध्यस्थ का जो अधिदेश है उसे समाप्त समझा जायेगा, इस बात का स्पष्ट उल्लेख है। यह प्रावधान धारा 34(5) और (6) के घोर–विपरीत है जहां, जैसा कि पहले उल्लेख है कि यदि धारा–34 के प्रार्थनापत्र को निस्तारित करने का समय समाप्त हो चुका हो तो उसका कोई परिणाम नहीं दर्शाया गया है। यह एक और सूचक है जो यह दर्शाता है कि समान संशोधन अलग–अलग परिणाम चाहता है।

10. आदेश–8 नियम–1 के संशोधन पर विभिन्न उच्च न्यायालयों के निर्णयों द्वारा अब यह अभिनिर्धारित किया गया है कि लिखित कथन नहीं दाखिल करने का परिणाम दिये जाने के कारण सिविल प्रक्रिया संहिता के संशोधित प्रावधानों को अज्ञापक अभिनिर्धारित किया गया है। (देखें ओकू टेक प्राइवेट लिमिटेड बनाम संगीत अग्रवाल एवं अन्य जिसमें दिल्ली उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा सी.एस. में

(ओ.एस.) संख्या० 3390/2015 में पारित आदेश दिनांक 11.08.2016 तथा जैसा कि अन्य निर्णयों सहित दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय माजा कॉस्मेटिक बनाम ओएसिस कॉमरशियल प्राइवेट लिमिटेड 2018 एस.सी.सी. ऑनलाइन दिल्ली 6698 में अनुपालन किया गया है।

11. हम इस मत में है कि इन निर्णयों में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा उपरोक्त निर्णयों में जो मत लिया गया है, वह इस तथ्य को देखते हुए सत्य है कि लिखित कथन दाखिल करने के अधिकार खोने का परिणाम, समय का आगे विस्तार न होना; और यह तथ्य कि न्यायालय लिखित कथन को अभिलेख पर लेने के लिये अनुज्ञात न कर सकना, यह सभी इस तथ्य को इंगित करते हैं कि आदेश–8 नियम–1 के तहत लिखित कथन दाखिल करने के पूर्व के कानून का अब रद्ध हो गये हैं।

12. हालांकि, प्रतिवादीगण की तरफ से प्रस्तुत विद्वान अधिवक्ता द्वारा भानू कुमार जैन, (सुपरा) एवं शेख सलीम हाजी अब्दुल ख्य्यूमसाब (सुपरा) की विधि व्यवस्था पर पुरजोर विश्वास व्यक्त किया गया और विशेषतः पहले निर्णय के पैरा–22 एवं 27 और दूसरे निर्णय के पैरा–4 एवं 19 पर।

13. हम इस मत में है कि उपरोक्त दोनों निर्णय संशोधन के पूर्व की अवस्था से सम्बन्धित हैं और वर्तमान वाद के तथ्यों से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं रखते हैं।

14. प्रतिवादीगण की ओर से प्रस्तुत विद्वान अधिवक्ता द्वारा आर.के. रोजा बनाम यू.एस. रोयडू एवं अन्य (सुपरा) पर भी विश्वास व्यक्त करते हुए य़ह कहा गया है कि प्रतिवादी लिखित कथन दाखिल करने से पहले वाद को खारिज करने हेतु आदेश–7 नियम–11 का प्रार्थनापत्र दाखिल कर सकता है। हम इस मत में हैं कि उक्त निर्णय को उस तरह से नहीं पढ़ा जा सकता जिस तरह से प्रतिवादीगण की तरफ से प्रस्तुत विद्वान अधिवक्ता द्वारा पढ़ा गया है। किसी वाद के दाखिल होने पर आदेश–7 नियम–11 की कार्यवाही लिखित कथन दाखिल करने से स्वतंत्र है। वास्तव में, उक्त निर्णय के पैरा–6 में इस बात का उल्लेख है कि–

“हालांकि, हम यह जोड़ने में जल्दबाजी कर रहें हैं कि आदेश –7 नियम–11 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत नामंजूर किये जाने हेतु प्रार्थनापत्र दाखिल करने की स्वतंत्रता लिखित कथन दाखिल करने का अवसर समाप्त होने पर उसे पुनः प्राप्त करने की चाल बनने नहीं दे सकते।"

15. प्रतिवादीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा तब यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि यह नहीं माना जा सकता है कि जब विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा प्रथम प्रश्नगत आदेश दिनांकित 05.12.2017 पारित किया गया, उस समय उन्हे उक्त संशोधनो की जानकारी न हो। हम इस काल्पनिक क्षेत्र में प्रवेश नहीं करना चाहते। उनके द्वारा तब यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि चूंकि उक्त निर्णय उसे 120 दिन से ऊपर लिखित कथन दाखिल करने की स्वीकृति प्रदान करता है और यह एक न्यायालय का कार्य है, जो किसी व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डाल सकता। इस सिद्धांत का प्रयोग नहीं किया जा सकता, जब तक कि वाद निर्णीत न हो। दिनांक 05.12.2017 का आदेश न्यायाधीन है, क्योंकि इसकी सत्यता को हमारे समक्ष चुनौती दी गयी है।

16. प्रतिवादीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा तब न्यायालय के अंतर्निहित शक्ति पर विशेष जोर देते हुए यह कहा गया कि किसी भी वाद में एक प्रक्रियात्मक प्रावधान जैसा कि संशोधन में है, जो एक अन्यायपूर्ण नतीजे की ओर ले जाता है, उसे हमेशा किसी केस के दिये गये तथ्यों में अनदेखा करना चाहिये जहां उस तरह के अन्यायपूर्ण नतीजे निकल रहे हों, जैसा कि वर्तमान वाद के तथ्यों में है। हम पुनः इस विचार में है कि इस तर्क के खड़े होने का कोई आधार नहीं है। इस न्यायालय द्वारा पारित मनोहर लाल चोपड़ा बनाम राय बहादुर राव राजा सेठ हीरालाल, [1962] पूरक 1 एस.सी.आर. 450 में न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि:–

“इंदौर में स्थित वाद, जो बाद में दाखिल किया गया, उसे संहिता की धारा–10 के तहत रोक देना चाहिये। उक्त धारा के प्रावधान स्पष्ट, निश्चित और अनिवार्य है। एक न्यायालय जिसमें जब पश्चातवर्ती दावा दाखिल किया जाता है तो उसे खास निर्दिष्ठ परिस्थितियों में उक्त वाद के विचारण की उस वाद की कार्यवाही से रोका जाता है। यदि सिविल

प्रक्रिया संहिता में किसी आकस्मिक परिस्थिति से निपटने के लिये कोई विशेष प्रावधान दाखिल किये गये दो दावों में हो, तब धारा 151 के तहत अन्तर्निहित शक्ति का प्रयोग न्यायहित में नहीं किया जा सकता है। (470 पेज पर)

स्पष्टतः आदेश–5 सपठित आदेश–8 नियम–1 और 10 के स्पष्ट, निश्चित व अनिवार्य प्रावधानों के रहते, धारा–151 के अंतर्निहित शक्ति के द्वारा, जो उसमें कहा गया है, उसके विपरीत करने के लिये धोखा नहीं दिया जा सकता।

17. स्पष्टतः आदेश दिनांक 05.12.2017 का आदेश सिविल प्रक्रिया संहिता में संशोधन के मद्देनजर स्थिर नहीं रह सकता। जब हम द्वितीय आदेश दिनांकित 24.09.2018 पर आते है तब इस आदेश का केवल कारण यह है कि आदेश दिनांक 05.12.2017 अंतिम हो चुका है।

18. तथ्यात्मक कहें तो, यह सही नहीं है क्योंकि उक्त आदेश के विरूद्ध विशेष अनुमति याचिका दाखिल की गयी है। इसके बावजूद, इस न्यायालय द्वारा कैनरा बैंक बनाम एन.जी. सुबारैया सेठी एवं अन्य (सुपरा) के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि (पेज 3414): "(i) एक विधि–विधिक जो समान पक्षकार के मध्य पश्चात वाद या कार्यवाही में उत्पन्न हुआ हो उसमें पूर्व निर्णय लागू नहीं होता यदि, कोई गलत निर्णय किसी पूर्ववर्ती वाद या प्रक्रिया में कानूनी प्रतिषेध के सम्बन्ध में दिया गया हो, तब उक्त कानूनी प्रतिषेध को प्रभाव नहीं दिया जा सकता। यह इस तथ्य के बावजूद कि पक्षकारों के मध्य विवाघक–विषय समान पक्षकारो के मध्य हो जैसा कि उक्त विवाद प्रत्यक्षतः और सारतः पूर्ववर्ती वाद या कार्यवाही में हो। यही वह कारण है कि इस तरह के मामलों में पक्षकारों का अधिकार केवल विचार का विषय नहीं होता है (जैसे कि पक्षकारों के मध्य कानून की गलत व्याख्या का मामला) चूंकि कानूनी प्रतिषेध में लोकहित निहित होता है। इसलिये उसे समाप्त नहीं किया जा सकता। यही वह समान कारण के लिये जो कि उस विषय में निहित है जो विधि–विधिक से सम्बन्धित है और वह क्षेत्राधिकार सम्बन्धित प्रश्न उत्पन्न करता है। हमने देखा है कि किस तरह नटराज स्टूडियोज (ए.आई.आर. 1981 एस.सी. 537) (सुपरा) के मामले में

यह अवधारित किया गया है कि कैसे बॉम्बे किराया अधिनियम की धारा–28 में कानूनी प्रतिषेध का लोकहित निहित होने के कारण उसे प्रभाव दिया गया। उसी तरह, अन्य कानूनी प्रतिषेध में निहित लोकहित, जो न्यायालय के क्षेत्राधिकार में अनिवार्य रूप से नहीं जाता हो, निश्चित रूप से समान प्रभाव देना चाहिये। अन्यथा कानून के विशेष सिंद्धान्त पक्षकारों पर लागू होंगे, जब लोकहित के सम्बन्ध में विशेष ध्यान यह बाध्यकारी करे कि इसे नहीं किया जा सकता।

उपरोक्त पैरा वर्तमान मामलों के चारों तथ्यों पर लागू होता है। यदि यह मान भी लिया जाये कि आदेश दिनांक 05.12.2017 अंतिम हो तो भी पूर्व–निर्णय कानूनी प्रतिषेध के गलत व्याख्या के रास्ते में नहीं आता है। वर्तमान वाद इसी तरह का वाद है। अतः द्वितीय आदेश भी अपास्त किये जाने योग्य है।

19. अपील इस प्रभाव के साथ स्वीकार की जाती है कि प्रतिवादी सं० 1 के लिखित कथन को अभिलेख से पृथक किया जाये। अपील स्वीकृत।

अनुवादकर्ताः
ललित नारायण झा
प्रथम अपर जिला जज
सहारनपुर